जीवन के कुछ परम सत्य

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भारतीय संस्कृति चरित्र प्रधान संस्कृति है। इस संस्कृति में जीवन से भी अधिक महत्व जीवन मूल्यों का है। इन मूल्यों के प्रति आस्थावान व्यक्ति ही अपनी चारित्रिक उज्ज्वलता को सुरक्षित रख सकता है। मूल्यहीनता आज का सबसे बड़ा संकट है। हमारे देश की जनता को जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। भोजन, वस्त्र, आवास, चिकित्सा और शिक्षा जैसी अपेक्षाओं के लिए भी जनता निश्चिन्त नहीं है। ऐसी स्थिति में जीवन स्तर को उन्नत बनाने की बात पर विचार होना भी बहुत मुश्किल है। करोड़ों–करोड़ों लोगों की समस्या देश की अहम समस्या होती है उसे नजरन्दाज नहीं किया जा सकता। जीवन के कुछ ऐसे परम सत्य हैं जिनको विस्मृत नहीं किया जा सकता। कुछ सत्य शाश्वत हैं और कुछ सामयिक। सामयिक मूल्यों में देश काल और परिस्थिति के अनुसार बदलाव होते रहते हैं। शाश्वत मूल्यों की सत्ता त्रैकालिक होती है। उन मूल्यों को किसी भी परिस्थिति में बदला नहीं जा सकता। चिन्ता तब होती है जब ऐसे मूल्यों पर भी विस्मृति का धुंध छा जाता है और उनकी पहचान कठिन हो जाती है। शाश्वत मूल्य जीवन को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया है। अभय, अनासक्ति, प्रामाणिकता, मृदुता, स्वावलम्बन, विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय, सत्य, आत्मानुशासन, मानसिक संतुलन, सहिष्णुता, कर्तव्यनिष्ठा, मानव जाति की एकता ऐसे कुछ शाश्वत मूल्य हैं। परिवर्तनशील मूल्यों का विकास ह्रास होता रहता है। ऊपर बताये गये मूल्य वर्तमान प्रासंगिक हैं और भविष्य में भी रहेंगे। हमारे देश की नई पीढ़ी दोहरे जीवन मूल्यों से गुजर रही है। एक ओर उनके पास अपनी सांस्कृतिक विरासत है तथा दूसरी ओर है भोगवाद की चकाचौंध। इस चकाचौंध में त्याग की चेतना ओझल हुई है। भोगवादी मनोवृत्ति से जुड़ी हुई आकांक्षाएं उसे चरित्र और नैतिकता के रास्ते से भटका रही है। इसलिए आज कुछ नई समस्याएं उत्पन्न हो गयी हैं। अनुशासनहीनता, चरित्रहीनता, क्रूरता, साम्प्रदायिक उन्माद, जातिभेद और रंगभेद की नीति, अणु शस्त्रों की विवेकहीन प्रतिस्पर्धा आदि इस युग की प्रमुख समस्याएं हैं। इन समस्याओं के केन्द्र में दो तत्त्व है–हिंसा और परिग्रह।

हिंसा का मूलभूत कारण परिग्रह है। मनुष्य के पास परिग्रह होता है। वह परिग्रह को सुरक्षित रखना चाहता है, उसको संवर्धित करना चाहता है। इसलिए उसको हिंसा के क्षेत्र में उतरना पड़ता है। परिग्रह की चेतना भीतर है तथा हिंसा की चेतना बाहर। इस समस्या का समाधान युद्ध नहीं है, आतंकवाद नहीं है, औद्योगीकरण नहीं है, कम्प्यूटर नहीं है और रॉबोट नहीं है। समस्या की इस नदी को पार करने के लिए जीवन के परम सत्य को जानना आवश्यक है। जीवन का परम सत्य है आत्मज्ञान अपने अस्तित्व को पहचानना। जो व्यक्ति इस परम सत्य को जान लेता है वह क्रूर नहीं हो सकता, आतंकवादी नहीं हो सकता, छुआछूत और रंगभेद की नीति को प्रश्रय देने वाला नहीं हो सकता, साम्प्रदायिक उन्माद नहीं फैला सकता, खाद्य पदार्थों में मिलावट नहीं कर सकता, वोटों को क्रय–विक्रय नहीं कर सकता, सामाजिक कुरूढ़ियों का पक्षधर नहीं हो सकता तथा मादक और नशीले पदार्थों का सेवन नहीं कर सकता। परम सत्य को जान लेने से संस्कार बदलते हैं और व्यवहार परिष्कृत हो जाता है। आज की युवा पीढ़ी चौराहे पर खड़ी है। उसके सामने न तो कोई निश्चित मंजिल है और न ही कोई निश्चित रास्ता। उसके मन में होने की आकांक्षा है और कुछ ऑखों में सपना है। आकांक्षा की पूर्ति हो सकती है, सपना साकार हो सकता है बशर्ते की भूले–बिसरे जीवन मूल्यों की सार्थक तलाश हो। जब तक युवा पीढ़ी शाश्वत जीवन मूल्यों और परम सत्य के प्रति आस्थाशील नहीं होगी, उन्हें आत्मसात नहीं करेगी और व्यवहार में उनको प्रतिष्ठा नहीं देगी तब तक भौतिक विकास किया जा सकता है लेकिन आध्यात्मिक विकास नहीं होगा। सुख–सुविधाओं के साधन जुटाए जा सकते हैं लेकिन स्थाई सुख और तृप्ति का अनुभव नहीं होगा।

जीवन का परम सत्य है आत्मतत्त्व। आत्मा द्रव्य है, ज्ञान है उसका गुण। जो आत्मा है, वह ज्ञाता है और जो ज्ञाता है, वह आत्मा है। जिस साधन से आत्मा जानती है, वह ज्ञान आत्मा है। इसका तात्पर्य है कि ज्ञान आत्मशून्य नहीं है। आत्मा भी जीव है और चैतन्य भी जीव है। जिस साधन से आत्मा जानती है, वह ज्ञान भी आत्मा है। आत्मा उत्पाद–व्यय–ध्रौव्ययुक्त है। आत्मा का अस्तित्त्व ध्रुव है। ज्ञान के परिणाम उत्पन्न होते हैं और नष्ट होते हैं। इस प्रकार आत्मा का अनेक रूपों में कथन होता है। आत्मा ज्ञान के बराबर है क्योंकि द्रव्य अपने–अपने

गुण–पर्यायों के समान होता है। अतः जीव भी अपने ज्ञानगुण के बराबर है। आत्मा ज्ञान से न तो अधिक और न कम परिणमन करता है। ज्ञान ज्ञेय का प्रमाण है। जैसे ईंधन में स्थित आग ईंधन के बराबर है, उसी तरह सब पदार्थों को जानता हुआ ज्ञान ज्ञेय प्रमाण है। चेतना जीव का मौलिक स्वरूप है। जीव निसर्गतः अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन एवं अनन्त चारित्र विशिष्ट है। कर्मों के आवरण के कारण जीव का शुद्ध रूप ओझल रहता है। जब कर्मों का सम्पूर्ण रूप से क्षय हो जाता है तो आत्मा अपने शुद्ध रूप में अवस्थित हो जाता है।